॥ श्री ॥

bhakti-sangraha

vibhinna aachaarya · प्राकृतम्/हिन्दी · ११ पद्य · ~२ मिनट

चैत्यभक्ति चैत्यभक्ति अपरनाम जयति भगवान् स्तोत्र श्री गौतमस्वामी प्रणीत (पद्यानुवाद एवं अथर् सहित) गणिनी ज्ञानमती श्री गौतमस्वामी श्री वधर्मानस्वामी को प्रत्यक्ष करके ‘जयति भगवान्’ इत्यादि उच्चारण करते हQ— (हरिणी छंद) जयति भगवान् हेमाम्भोजप्रचारविजृंभिता- वमरमुकुटच्छायोù ीणर्प्रभापरिचुम्बितौ । कलुषùदया मानोद्भ्रù ान्ता:परस्परवैरिणो विगतकलुषा: पादौ यस्य प्रपद्य विशÕ ासु:।।१।। ` (५) (६) (७) (८) पद्यानुवाद जय हे भगवन् ! चरण कमल तव, कनक कमल पर करW विहार। इन्द्रमुकुट की कांति प्रभा से, चुंबित शोभ् ें आिंत सुखकार।। जातविरोधी कलुषमना, ›âध मान सहित जन्तूगण भी। ए ेसे तव पद का आश्राय ले, प्रेम भाव को धरW सभी।।१।। अथर्- हे भगवन्-हे महावीर स्वामिन्! आप जयशील हें-आपकी जय हो, जय हो, जय हो! आपके चरण कमल सुवणर्मय कमलें पर सामान्य मनुष्यें म् ें न पाये जाने वाले और चरण ›âम के संचार से रहित प्रचार-गमन से शोभायमान हQ, देवें के मुकुटें म् ें लगी हुई छाया-मणियें से निकलती हुई प्रभा से आलिंगित-स्पर्शित हQ ए ेसे जिनके चरणें म् ें आकर कलुष ùदय वाले, अहंकार से युक्त, परस्पर वैरी ए ेसे सपर्, नेवला आदि जीव अपने-अपने स्वाभाविक ›âर स्वभाव को छोंडकर विÕ ास को प्राप्त होते हQ वे भगवान् जिनेन्द्र जयवंत रहW ।।१।। भावाथर्- यहाँ केवली भगवान महावीर स्वामी के श्रीविहार का एवं समवसरण की महिमा का वणर्न है। केवली भगवान जब श्रीविहार करते हQ तब उनके चरणें के नीचे देवगण स्वणर् कमलें की रचना करते हQ। भगवान १०० इंद्रें से वंद्य हQ एवं उनके आश्राय म् ें जन्मजात विरोधी पशु भी मैत्री भाव को प्राप्त हो जाते हQ। श्रीगौतमस्वामी जिन् ेंद्रधमर् को नमस्कार करते हुये कहते हQ— तदनु जयति श्रोयान् , धमर्: प्रवृद्धमहोदय: कुगति-विपथ-क्लेशाद्योÓसौ विपाशयति प्रजा:। परिणतनयस्या*गी-भावाद्विवित्तविकल्पितं भवतु भवतŒ ातृ त्रेधा जिनेन्द्रवचोÓमृतम्।।२।। जय हो श्रोयस्कर धमार्मृत, वृद्धिंगत महिमाशाली। कुगति कुपथ से प्राणीगण को, निकालकर दे सुख भारी।। नय को मुख्य गौण करने से, बहुत भेदयुत सुखदाता। ए ेसे जिनवचनामृतमय, हे धमर्! करो जग से रक्षा।।२।। अथर्- अनन्तर उत्तमक्षमादिलक्षण श्रो... धमर् जयवंत हो, जिससे प्राणियें के स्वगार्दि पदें की प्राप्ति वृद्धि को प्राप्त होती है। जो संसारी जीवें को नरकादि कुगतियें से, मिथ्यादर्शन आदि कुमार्गों से और उनसे उत्पन्न क्लेशें से छुंडाता है तथा द्रव्याथिर्क नय को गौणकर पयार्याµथक नय की प्रधानता लेकर अ”, पूवर् आदि ™प से रचा गया अथवा पूवार्पर दोषरहित रचा गया ए ेसा उत्पाद—व्यय —धÇ ौव्य™प से अथवा अ”, पूवर् और अंग—बा¢™प से तीन प्रकार का जिनेन्द्रदेव का वचन™प अमृत हम सभी की संसार से रक्षा करे।।२।। भावाथर्- इस काव्य म् ें भगवान की दिव्यध्वनि से प्रगट होने वाले द्वादशांग श्राुत को एवं दशधमर् आदि ¤प जैनधमर् को नमस्कार किया है। श्री गौतमस्वामी भगवान के ज्ञान की वंदना करते

हQ— तदनु जयताज्जैनी, वित्ति: प्रभंगतरंगिणी। प्रभवविगमधҪौव्य-द्रव्यस्वभावविभाविनी।। नि®पमसुखस्येदं द्वारं विघट्य निरगर्लं। विगतरजसं मोक्षं देयािVारत्ययमव्ययम्।।३।। जय हो जैनी वाणी जग म्ें, सप्तभंगमय गंगा है। व्यय उत्पाद धҪौव्ययुत द्रव्यें, के स्वभाव को प्रगट करे।। अनुपम शिवसुख द्वार खोलती, अव्यय सुख को देती है। विघ्न रहित अ® कमर् धूलि से, रहित मोक्ष को देती है।।३।। अथर्- अनन्तर जिनेन्द्रदेव का केवलज्ञान जयवंत हो, जिसम्ें स्यादस्ति, स्याVास्ति आदि सात भंग™प कल्लोल्ें हQ जो द्रव्यें के उत्पाद, व्यय, धҪौव्य™प स्वभावें को प्रकाशित करता है। एेसा यह केवलज्ञान अनन्तसुख के मोहनीय™प द्वार को अंतराय-™प अगर्ला से रहित उद्घाटन कर ज्ञानदर्शनावरण™प रज से रहित व्याधि अथवा जरा- मरण से रहित आिवनश्वर मोक्ष को प्रदान करे।।३।। भावाथर्- इस काव्य म्ें भगवान के दिव्य केवलज्ञान को नमस्कार करते हुये उसकी महिमा बतलायी है।

(९) (१०) (११) (१२) श्री गौतमस्वामी नवदेवें की स्तुति करते हुए पंचपरमे का वंदन करते हQ— अर्हत्सिद्धाचार्यो- पाध्यायेभ्यस्तथा च साधुभ्य:। सवर्जगद्वन्द्येभ्यो, नमोÓस्तु सवर्त्र सर्वेभ्य:।।४।। अर्हत् सिद्धाचायर् उपाध्याय, सवर् साधुगण सुरवंदित। त्रिभुवन वंदित पंच परमगु®, नमोÓस्तु तुमको मम संतत।।४।। अथर्- सम्पूणर् जगत् से वन्दनीय सवर् अर्हंतें को, सवर् सिद्धें को, सवर् आचार्यों को सवर् उपाध्यायें को और सवर् साधुआW को मेरा नमस्कार हो ।।४।। भावाथर्- ढाईद्वीप म्ें १७० कमर्भूमियें म्ें जितने भी पंचपरमेष्ठी हQ, हुये हQ और होय्ेंगे, श्री गौतमस्वामी ने उन सबकी यहाँ वंदना की है। जो जन्म के १० आfतशय, केवलज्ञान के १० आfतशय और देवकृत १४ आfतशय, एेसे ३४ आfतशयें से सहित हQ। ८ महाप्रातिहार्यों से सहित एवं चार अनंत चतुष्टय से सहित हQ। एेसे ४६ गुणें से सहित आfरहंत परमेष्ठी हQ। सिद्धें के मुख्य ८ गुण हQ। आचार्यों के ३६ गुण, उपाध्यायें के २५ गुण एवं साधुआW के २८ गुण माने हQ। अर्हंत परमेष्ठी को नमस्कार करते हQ— मोहादिसवर्दोषारि- घातकेभ्य: सदाहतरजोभ्य:। विरहितरहस्कृतेभ्य:, पूजार्हेभ्यो नमोÓर्हद्भ्य:।।५।। मोहारि के घातक द्वयरज, आवरणें से रहित जिनेश। विघ्न-रहस विरहित पूजा के, योग्य अर्हत को नमूँ हमेश।।५।। अथर्- जो मोह, राग, द्वेष आदि सम्पूणर् दोष™प शत्रुआW को नष्ट कर चुके हQ जिनने हमेशा के लिये ज्ञानावरण™प एवं दर्शनाकरण¤प रज को न„ कर दिया है तथा अन्तराय कमर् का भी जिनने विनाश कर दिया है एेसे पूजा योग्य अर्हंतें को मेरा नमस्कार हो ।।५।। भावाथर्- मोहनीय कमर् को शत्रु कहा है, ज्ञानावरण, दर्शनावरण को रज-धूलि के सÂश कहा है एवं अंतराय को रहस् कहा है। इन चारें घातिया कर्मों से रहित, केवली भगवान गभर्, जन्म आदि कल्याणकें म्ें इन्द्रादि द्वारा आfतशय¤प से पूजे जाते हQ इसलिये 'पूजार्ह' तीनें लोकें म्ें पूजा के योग्य महान हQ। आज कुछ लोगें का कहना है कि—आfरहंत अथार्त् आfर- शत्रु को मारने वाले—Eहसा करने वाले आfरहंत हQ। एेसा नहाR है मोहनीय कमर् यह केवल पर को अपना मानना यह मोह परिणाम है न कि कोई व्यक्ति विशेष, इसलिये आfरहंत भगवान अपने राग, द्वेष, मोह परिणामें को हटाने वाले हQ, न कि हिंसा करने वाले, यहाँ यह ध्यान रखना है। श्री गौतमस्वामी जिनधमर् की वंदना करते हQ— क्षान्त्याजर्वादिगुणगण- सुसाधनं सकललोकहितहेतुं। शुभधामनि धातारं, वन्दे धमर्ं जिनेन्द्रोक्तम्।।६।। क्षमादि उत्तम गुणगण साधक, सकल लोक हित हेतु महान्। शुभ शिवधाम धरे ले जाकर, जिनवर धमर् नमूँ सुख खान।।६।। अथर्- क्षमा, मार्दव, आजर्व, सत्य आदि गुणें का समुदाय जिसकी उत्पत्ति म्ें साधन है। जो सम्पूणर् लोक के हित का कारण है और शुभ धाम—निवार्ण जो उसम्ें स्थापन करने वाला है एेसे जिनेन्द्र देव द्वारा कथित धमर् की मQ वन्दना करता हू्ँ ।।६।। भावाथर्- श्री गौतमस्वामी ने यहाँ उत्तम क्षमादि १० धर्मों को जिनधमर् कहा है। अन्यत्र-वीरभक्ति म्ें दया,

आEहसा, संयम और तप को भी धमर् कहा है। जो उत्तम धाम-स्वगर् और मोक्ष म्ें ले जाकर धरे— पहुँचावे वही सच्चा धमर् है। वह दया, आEहसा, संयम, तप व १० धमर्¤प है। रत्नत्रय को भी धमर् कहा है। मुख्य¤प से जिनेन्द्रदेव केवली भगवान के द्वारा कथित धमर् ही मंगल है, लोक म्ें उत्तम है और शरणभूत है। वह ‘आEहसा परमो धमर्:’ के नाम से जाना जाता है। श्री गौतमस्वामी जिनआगम की वंदना करते हQ— मिथ्याज्ञानतमोवृत-लोवैâकज्योतिरमितगमयोगि। सांगोपांगमजेयं, जैनं वचनं सदा वन्दे।।७।। मिथ्याज्ञान तमोवृत जग म्ें, ज्योतिमर्य अनुपम भास्कर। अंगपूवर्मय विजयशील, जिनवचन नमूँ मQ शिर नत कर।।७।। अथर्- जो मिथ्याज्ञान™प अन्धकार से आच्छादित—व्याप्त एेसे लोक—संसार का प्रकाशक होने से आद्वितीय ज्योति है। अपरिमित श्रुातज्ञान का जनक होने से आमित ज्योति से संबंधित है। आचारादि अÁों और पूवर्, वस्तु आदि उपांगें से युक्त है तथा एकान्तवादियें कर अजेय है एेसे जैनवचन की मQ सदा वन्दना करता हूँ।।७।। भावाथर्-द्वादशांग अथवा ११ अंग, १४ पूवर्¤प श्रुातज्ञान आज उपलब्ध नहाR है, फिर भी उनके अंश¤प जो श्रुातज्ञान है और जो चार अनुयोगें म्ें निबद्ध आचार्यों द्वारा प्रणीत श्रुातज्ञान है वह सभी जिनागम है उसकी मQ वंदना करता हूँ। वतर्मान म्ें प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग और द्रव्यानुयोग¤प से जो भी जैन आगम है, जो पूवार्चार्यों द्वारा लिपिबद्ध किया गया है। यह श्री गौतमस्वामी के मुखकमल से निगर्त चैत्यभक्ति व प्रति›âमण पाठ, जिनकी श्री प्रभाचायर् कृत टीका उपलब्ध है। तथा षट्खण्डागम, कसायपाहुड आदि ग्रांथ व उपलब्ध आचायर् प्रणीत ग्रांथ सभी प्रमाणीक जिनवचन— जिनागम हQ।

(१३) (१४) (१५) (१६) श्री गौतम स्वामी जिनचैत्य की वंदना करते हQ— भवनविमानज्योति-व्यËतरनरलोकविÕाचैत्यानि। त्रिजगदभिवन्दितानां, वन्दे त्रेधा जिनेन्द्राणाम्।।८।। भवनवासि व्यन्तर ज्योतिष, वैमानिक म्ें नरलोक म्ें ये। जिनभवनें की त्रिभुवन वंदित, जिनप्रतिमा को वंदूँ मQ।।८।। अथर्- भवनवासी देवें, कल्पवासी देवें,ज्योतिष्क देवें और व्यन्तर देवें के विमानें म्ें तथा मनुष्य लोक म्ें तीन जगत् से वन्दनीय जिनेन्द्रदेव की जितनी भी प्रतिमा हQ उन सबकी मQ मन, वचन और काय से वन्दना करता हूँ ।।८।। भावाथर्- भवनवासी व वैमानिक देवें के यहाँ मंदिरें म्ें जिनप्रतिमाआW की तथा मध्यलोक के अकृत्रिम जिनमंदिरें म्ें जो प्रतिमाय्ें विराजमान हQ उनकी संख्या है एवं नरलोक म्ें जो कृत्रिम जिनप्रतिमाय्ें तथा व्यंतर देवें के व ज्योतिषी देवें के मंदिरें की जिनप्रतिमाय्ें असंख्यातें हQ, उन सबकी श्री गौतमस्वामी ने वंदना की है। ये जिनप्रतिमाय्ें ५०० धनुष प्रमाण प©सन मानी गई है। तथा जघन्य माप वाले मंदिरें म्ें यथा योग्य छोटी भी हेंगी। अकृत्रिम प्रतिमाय्ें अनादिकाल से हQ और अनंतकाल तक रहेगी। पुन: कृत्रिम प्रतिमाय्ें जो मध्यलोक म्ें ढाईद्वीप तक ही हQ, उन्हW भी नमस्कार किया है। श्री गौतम स्वामी जिनचैत्यालय की वंदना करते हQ— भुवनत्रयेÓपि भुवन- त्रयाधिपाभ्यच्यर्तीथर्कर्तृणाम्। वन्दे भवाग्निशान्त्यै, विभवानामालयालीस्ता:।।९।। भुवनत्रय म्ें जितने जिनगृह, भवविरहित तीथËकर के। भवाग्नि शांति हेतु नमूँ मQ, त्रिभुवनपति से आर्चिर्त ये।।९।। अथर्- जिनका संसारपरिभ्रमण विन" हो चुका है, तीन भुवन के स्वामी देवेन्द्र, नरेन्द्र और धरणेन्द्र द्वारा पूज्य एेसे तीथËकरें के आलय - मन्दिर की पंक्तियें को भी संसार™प आग्नि की शांति के लिये वन्दना करता हूं ।।९।। भावाथर्- तीनें लोकें म्ें अकृत्रिम जिनमंदिर असंख्यात हQ तथा कृत्रिम जिनमंदिर तीनें कालें की अपेक्षा अनंत हो जाते हQ इस एक काव्य से उन सबकी वंदना हो जाती है। अकृत्रिम जिनमंदिरें म्ें उत्कृष्ट प्रमाण सौ योजन लंबा, पचास योजन चौडा व पचहत्तर योजन ऊँचा कहा है। मध्यम इनसे आधाप्रमाण वाले व जघन्य उनसे भी आधा प्रमाण वाले माने गये हQ। जंबूवृक्ष आदि के मंदिर इनसे भी छोटे हQ। उत्कृष्ट मंदिर तो १ योजन म्ें ४ कोश— ८ मील होने से १०० ² ८ · ८०० मील लंबा हो जाता है, इसका विस्तृत वणर्न त्रिलोकसार म्ें पढW। श्री गौतम स्वामी नवदेवें को नमस्कार करते हQ— इति पंच महापु®षा: प्रणुता जिनधमर्-वचन-चैत्यानि। चैत्यालयाश्चा विमलां, दिशन्तु बोधिं बुधजनेष्टाम्।।१०।। इस विध प्रणुत पंचपरमे, श्री जिनधमर् जिनागम को। विमल चैत्य चैत्यालय वंदूँ, बुधजन इ० बोधि मम दो।।१०।। अथर्- इस तरह वंदना किये गये अर्हंत, सिद्ध, आचायर्, उपाध्याय, साधु, जिनधमर्, जिनवचन, जिनचैत्य और जिनचैत्यालय ये नवदेवता बुधजन जो गणधर देवादि उनको इ" एेसी मुझे निमर्ल बोधि देव्ें ।।१०।। भावाथर्- श्री गौतमस्वामी ने इन नवदेवताआW की वंदना की है, इससे स्पष्ट है

कि ये नवदेवता अनादिकाल से हQ व अनंतकाल तक रहWगे। इन नवदेवें का आf स्तित्व १६० विदेहें म्ें सदैव रहता है। भरतक्षेत्र व एेरावत क्षेत्रें म्ें चतुथर्काल म्ें रहता है। पंचमकाल म्ें आf रहंत, सिद्ध न होकर सात ही देव हQ। स्वगर् आदि म्ें पाँचें परमेष्ठी न होकर जिनधमर्, जिनागम, जिनचैत्य व चैत्यालय ये चार देव हQ। एेसे ही मध्यलोक म्ें तेरहद्वीप से आगे असंख्यातें द्वीप-समुद्रें म्ें असंख्यातें ज्योतिवार्सी देवें के व असंख्यातें व्यंतरदेवें के असंख्यात जिनमंदिर हQ। श्रीगौतमस्वामी कृत्रिम—अकृत्रिम जिनप्रतिमाआW की वंदना करते हQ — अकृतानि कृतानि चाप्रमेय- द्युतिमन्ति द्युतिमत्सु मन्दिरेषु। मनुजामरपूजितानि वंदे, प्रतिबिम्बानि जगत्त्रये जिनानाम्।।११।। द्युतिकर जिनगृह म्ें अकृत्रिम, कृत्रिम अप्रमेय द्युतिमान। नर सुर पूजित भुवनत्रय के, सब जिनबिंब नमूँ गुणखान।।११।। अथर्- तीन जगत म्ें विद्यमान महान कांति से समन्वित मन्दिरें म्ें स्थित मनुष्यें और देवें द्वारा पूज्य, प्रचुरतर प्रभायुक्त कृत्रिम और अकृत्रिम जिनेन्द्र के प्रतिबिंबें को मQ प्रणमन करता हूँ।।११।। भावाथर्- इस एक काव्य से श्री गौतमस्वामी ने तीनें लोकें के सभी अकृत्रिम व कृत्रिम जिन-प्रतिमाआW को नमस्कार किया है। वास्तव म्ें जिनप्रतिमाआW के वंदन से अनंत जन्म म्ें संचित अनंत पाप समूह एक क्षण म्ें नष्ट हो जाते हQ और तो क्या ? जिनाEबब के दर्शन से सम्यग्दर्शन प्रगट हो जाता है। यह जिनाEबब दर्शन सम्यग्दर्शन म्ें एक निमित्त माना गया है।

(१७) (१८) (१९) (२०) कृत्रिम-अकृत्रिम जिनप्रतिमा की वंदना — द्युतिमंडलभासुरा”य,,:, प्रतिमा अप्रतिमा जिनोत्तमानाम्। भुवनेषु विभूतये प्रवृत्ता, वपुषा प्राÀालिरस्मि वन्दमान:।।१२।। द्युतिमंडल भासुर तनु शोभित, जिनवर प्रतिमा अप्रतिम हQ। जग म्ें वैभव हेतु उन्हW, वंदूँ अंजलिकर शिर नत मQ।।१२।। अथर्- जो तीन भुवन म्ें विद्यमान हQ जिनका शरीर यि,, रचना प्रभामंडल से दैदीप्यमान है, एेसी अर्हंतें की अनुपम प्रतिमाआW को वन्दना करने वाला मQ पुण्य की प्राप्ति के लिये काय से अंजलि जोंडकर नमस्कार करता हँू अथार्त् एेसी प्रतिमाआW को हाथ जोंडकर भक्ति से नमस्कार करता हूँ।।१२।। भावाथर्- अकृत्रिम जिनप्रतिमाआW के सÂश ही कृत्रिम प्रतिमाय्ें वीतराग मुद्रा को धारण करने वाली हQ। इनकी कांति व मंदिरें का वैभव अनुपम है। भगवान के दर्शन की भावना मात्र से दो उपवास का फल, चल देने से ५ उपवास, मंदिर के दर्शन करते ही १ माह का, आंगन म्ें प्रवेश करते ही ६ मास का, प्रदक्षिणा देने से सौ वषर् के उपवास का, प्रभु के मुखकमल का दर्शन करते ही हजार उपवास व स्तुति करते ही अनंत उपवास का पुण्य प्राप्त होता है। श्रीगौतमस्वामी जिनप्रतिमा की शांतछवि का वणर्न करते हुये नमस्कार करते हQ— कथयंति कषायमुक्तिलक्ष्मीR, परया शान्ततया भवान्तकानाम्। प्रणमाम्यभि™पमूतिर्मंति, प्रति™पाणि विशुद्धये जिनानाम्।।१४।। परम शांति से कषायमुक्ती, को कहती मनहर आभि™प। भव के अंतक जिन की प्रतिमा, प्रणमूँ मन विशुद्धि के हेतु।।१४।। अथर् -उत्कृ,, शान्तता युक्त होने से कषाय का अभाव™प लक्ष्मी को कहने वाली, जिनेÕार का जैसा ™प है वैसी मूतिर्मती, एेसी संसार का नाश कर देने वाले जिनेÕारें की मूतिर्यें को आत्मपरिणामें की निमर्लता होने के लिये नमस्कार करता हूँ।।१४।। भावाथर्- जिनेन्द्र भगवान ने ›âोध, मान, माया, लोभ, रागद्वेष, मोह सभी को जीत लिया है अत: ये पूणर् शांत भाव को प्राप्त कर चुके हQ। ये उन्हाR जिनेन्द्रदेव की प्रतिमाय्ें प्रभु के अंत:करण की शांति व पवित्रता को प्रगट कर रही हQ यही कारण है कि इनके दर्शन से अशांतमन भी शांत हो जाता है। श्रीगौतमस्वामी भगवंतें की भक्ति का फल भव-भव म्ें जिनधमर् की याचना करते हQ— यदिदं मम सिद्धभक्तिनीतं, सुकृतं दुष्कृतवत्मर्रोधि तेन। पटुना जिनधमर् एव भक्ति- भर्वताज्जन्मनि जन्मनि स्थिरा मे।।१५।। दुष्कृतपथ रोधक मम सिद्ध-भक्ति से हुआ पुण्य जो भी। भव-भव म्ें जिनधमर् हि म्ें, Âोढ भक्ति रहे फल मिले यही।।१५।। अथर्- तीन जगत म्ें प्रसिद्ध अर्हंतें के प्रतिबिंबें की भक्ति करने से जो यह पुण्य मुझे प्राप्त हुआ है जो कि पाप के मागर् को रोकने वााला है उस समथर् पुण्य से मेरी भक्ति जन्म-जन्म म्ें जिनधमर् म्ें ही स्थिर होवे ।।१५।। भावाथर्- श्री गौतमस्वामी ने जिनप्रतिमाआW की वंदना का फल यही मांगा है कि जन्म-जन्म म्ें मेरी भक्ति जिनधमर् म्ें ही स्थिर बनी रहे, यह याचना हम सभी भक्तें के लिये साथर्क है। एक अकेली जिनभक्ति दुगर्ति म्ें जाने से रोक देती है और पुण्य के

भंडार को भर देती है। तथा च—जिनधमर् को अनंत संसार म्ें मQने नहाR पाया, यही कारण है कि आजतक संसारी है, यदि यह धमर् मिल गया होता तो आज सिद्धशिला पर विराजमान होते। अत: प्रभें ! अब यह धमर् मेरा छूटने न पाये, दो-चार भवें म्ें मेरी आत्मा को परमात्मा बना देवे। जिनपÇतिमाय्ें वस्त्र, अलंकार, आयुध आदि से रहित होती हQ — विगतायुधर्वि›ÿâयाविभूषा:, प्रकृतिस्था: कृतिनां जिनेÕाराणाम्। प्रतिमा: प्रतिमागृहेषु कांत्या-प्रतिमा: कल्मषशान्तयेÓभिवन्दे।।१३।। आयुध र्वि›ÿâय भूषा विरहित, जिनगृह म्ें प्रतिमा प्राकृत। कांती से अनुपम हQ कल्मष, शांति हेतु मQ नमूँ सतत।।१३।। अथर्- जो आयुध, विकार, आभूषणें से रहित हQ। अपने ही स्वभाव म्ें स्थित हQ तथा कान्ति कर अतुल्य हQ एेसी कृती अथार्त् कृतकृत्य जिनेÕारें की प्रतिमागृहें म्ें विराजमान प्रतिमाआW को पाप की शान्ति के लिये मQ वन्दन करता हूँ।।१३।। भावाथर्- जिन प्रतिमाय्ें शांतमुद्रा से समन्वित हQ। उनके पास गदा, त्रिशूल आदि व वस्त्रालंकार आदि नहाR है। कृत्रिम जिनप्रतिमाय्ें खड्गासन व प©ÿÿसन एेसी दो मुद्राआW म्ें बनायी जाती हQ। ये सभी प्रतिमाय्ें नग्न दिगम्बर वŒा, अलंकार आदि से रहित परम शांत वीतराग, छवि, नासाग्राÂष्टि से सहित होती है। इनके दर्शन से परिणामें म्ें अपूवर् शांति और अनंतगुणा पुण्य का संचय होता है।

(२१) (२२) (२३) (२४) श्री गौतमस्वामी चर्तुµणकाय देवें के गृहें की व मध्यलोक के कृत्रिम— अकृत्रिम जिनप्रतिमाआW की वंदना करते हQ — अर्हतां सवर्भावानां, दर्शनज्ञानसम्पदाम्। कीतर्यिष्यामि चैत्यानि, यथाबुद्धि विशुद्धये।।१६।। सब पदाथर्वित् दर्श ज्ञान-सम्पत् युत अर्हत् की प्रतिमा। यथा बुद्धि मनशुद्धि हेतु, गुण कीतर्न क™ अतुल महिमा।।१६।। अथर्- सम्पूणर् पदाथर् जिनके विषयभूत हQ अथवा परिपूणर् यथाख्यातचारित्र जिनके विद्यमान है, क्षायिकदर्शन और क्षायिकज्ञान™प संपदा-अनंत दर्शन, अनंतज्ञान जिनके मौजूद है एेसे अर्हतें के चैत्यें-प्रतिमाआW की मQ अपनी बुद्धि के अनुसार परिणामें की निमर्लता के लिए अथवा कमर्मल के प्रक्षालन के लिये कीतर्न क™गा ।।१६।। भावाथर्- अकृत्रिम प्रतिमाय्ें अर्हतें के सÂश होने से अर्हंत प्रतिमाय्ें हQ अथवा अनादि निधन होने से स्वयंसिद्ध प्रतिमाय्ें भी कहलाती हQ। जिनप्रतिमाआW का दर्शन साक्षात् जिनेन्द्र देव के दर्शन के समान पुण्य प्रदान करने वाला है। आज साक्षात् भगवान के समवसरण नहाR हQ, फिर भी उनकी प्रतिमाआW के दर्शन से सम्यग्दर्शन प्राप्त कर हम और आप भाग्यशाली हQ जो जिनप्रतिमाआW के निमार्ण, प्रति व महा- महोत्सव आदि के भी पुण्य अवसर प्राप्त कर रहे हQ। श्री गौतमस्वामी भवनवासी देवें के जिनमंदिर की वंदना करते हQ— श्रीमद्भावनवासस्था:, स्वयंभासुरमूतर्य:। वंदिता नो विधेयासु:, प्रतिमा: परमां गतिम् ।।१७।। श्रीमद् भवनवासि के गृह म्ें, भासुर जिनमूतिर् स्वयमेव। परम सिद्धगति करW हमारी, वंदूँ उन्हW क™ नित सेव।।१७।। अथर्- मेरे द्वारा जिनकी वन्दना की गई है जो भवनवासी देवें के दैदीप्यमान भवनें म्ें स्थित हQ जिनका स्व™प स्वयं भासुर™प है एेसी प्रतिमाएँ मुझ वंदक को परमगति अथार्त् मुक्ति प्रदान करW।।१७।। विशेषाथर्- अधोलोक म्ें खरभाग, पंकभाग म्ें भवनवासी देवें के भवनें म्ें सात करोंड बहत्तर लाख अकृत्रिम जनमंदिर हQ एवं मध्यलोक म्ें किन्हाR-किन्हाR के भवनपुर व आवास म्ें होने वाले असंख्यातें जिनमंदिर हQ एेसा त्रिलोकसार गा. २९६ के अनुसार जानना चाहिये। इन सभी जिनमंदिरें म्ें १०८-१०८ प्रतिमाय्ें विराजमान हQ। इनसे आfतिरिक्त मानस्तंभ, चैत्यवृक्ष, स्तूप, तोरणद्वार आदि म्ें भी जिनप्रतिमाय्ें विराजमान हQ। ये भवनवासी देव यद्यपि सम्यक्त्व सहित वहाँ जन्म नहाR लेते हQ फिर भी वहाँ कोई-कोई प्रतिमाआW के दर्शन से व भगवन्तें के पंचकल्याणक आदि म्ें उनसे सम्यग्दर्शन प्राप्त कर लेते हQ। अत: ये देव सम्यगÂष्टि माने गये हQ। श्री गौतमस्वामी मध्यलोक के कृत्रिम—अकृत्रिम जिनाEबबें की वन्दना करते हQ— यावन्ति सन्ति लोकेÓस्मिन्- नकृतानि कृतानि च। तानि सवार्णि चैत्यानि, वन्दे भूयांसि भूतये।।१८।। इस जग म्ें जितनी प्रतिमा हQ, कृत्रिम अकृत्रिम सबको। मQ वंदूँ शिव वैभव हेतु, सब जिनचैत्य जिनालय को।।१८।। अथर्- इस तियर्ग्लोक म्ें कृत्रिम और अकृत्रिम जितने भी जिनेन्द्रदेव के प्रतिबिंब हQ उन सबको मQ विभूति-

आत्मसंपत्ति के लिए वंदन करता हँू।।१८।। विशेषाथर्- मध्यलोक म्ें अकृत्रिम जिनमंदिर ४५८ हQ एवं ढाईद्वीप म्ें कृत्रिम जिनमंदिर त्रिकाल की अपेक्षा अनंतानंत होते हQ। वतर्मान म्ें केवल जंबूद्वीप के भरतक्षेत्र के आयर्खंड म्ें—भारत देश म्ें अनुमानत: १५ हजार जैनमंदिर हQ। शास्त्रें म्ें वणर्न है कि—एक जिनप्रतिमा बनवाने का व मंदिर बनवाने का इतना आधिक पुण्य है कि जीवनभर के संपूणर् उपवास आदि के पुण्य से भी असंख्यगुणा है उसका माप नहाRं किया जा सकता है, यही कारण है कि आज भी भव्यजन मंदिर व मूर्ितं के निमार्ण म्ें आधिक उत्साही देखे जा रहे हQ। श्री गौतम स्वामी व्यंतर देवें के जिनमंदिर की वंदना करते हQ— ये व्यन्तरविमानेषु, स्थेयांस: प्रतिमागृहा:। ते च संख्यामतिâान्ता:, सन्तु नो दोषविच्छिदे।।१९।। व्यंतर के विमान म्ें जिनगृह, उनम्ें अकृत्रिम प्रतिमा। संख्यातीत कही हQ वंदूँ, दोष नाश के हेतु सदा।।१९।। अथर्- व्यंतरें के आवासें म्ें सवर्दा अवस्थित जो असंख्यात प्रतिमागृह हQ वे मेरे दोषें की शान्ति के लिये होव्ें—उनकी मQ वंदना करता हूँ।।१९।। विशेषाथर्- व्यंतर देवें के असंख्यातें भवन अधोलोक म्ें—खरभाग, पंकभाग म्ें हQ तथा मध्यलोक म्ें असंख्यातें भवनपुर व आवास हQ। इन सभी म्ें जिनमंदिर माने हQ। इन व्यंतर देवें के असंख्यातें जिनमंदिरें की व उनम्ें विराजमान जिनप्रतिमाआें की वंदना श्रीगौतमस्वामी ने की है। श्री आदि देवियें के भवनें म्ें जिनमंदिरें का प्रमाण ग्रांथें के अनुसार मQने निकाला है तो सभी ढाईद्वीप के श्री आदि देवियें के कमलें का प्रमाण ६ करोड़, १८ लाख, ३१ हजार २७२ हQ। इन सभी म्ें जिनमंदिर हQ। एेसे असंख्यातें देवभवनें म्ें, वूâटें पर, व्यंतरें के भवनपुर, आवासें म्ें असंख्यातें जिनमंदिरें म्ें विराजमान सभी जिन प्रतिमाआें को मेरा नमस्कार होवे।

(२५) (२६) (२७) (२८) श्री गौतमस्वामी जिनप्रतिमाआW की वंदना का फल बताते हQ— इति स्तुतिपथातीत-श्रीभृतामर्हतां मम। चैत्यानामस्तु संकीतिर्ः, सवार्œावनिरोधिनी।।२२।। इस विध स्तुति पथातीत, अन्तर बाहिर श्रीयुत अर्हन्। चैत्यें के संकीतर्न से मम, सवार्œाव का हो रोधन।।२२।। अथर्- इस प्रकार स्तुति के मागर् को आतिâमण करने वाली अथार्त् जिनकी स्तुति इन्द्रादिक देव भी नहाR कर सकते एेसी अंतरंग और बहिरंग लक्ष्मी को धारण करने वाले अर्हंतें के चैत्यें-प्रतिमाआW की स्तुति मेरे सम्पूणर् आœावें को रोकने वाली होवे ।। २२।। विशेषाथर्- अधोलोक म्ें सात करोंड बहत्तर लाख, मध्यलोक म्ें चार सौ अावन, ऊध्वर्लोक म्ें चौरासी लाख, सत्तानवे हजार, तेईस एेसे ७,७२००००० ± ४५८ ± ८४,९७०,२३ · ८,५६,९७,४८१ अकृत्रिम जिनमंदिर है। उनम्ें १०८-१०८ प्रतिमाय्ें होने से ९२५,५३,२७,९४८ जिनप्रतिमाआW को मेरा नमस्कार होवे। तथा व्यंतरदेवें, ज्योतिषी देवें के असंख्यातें जिनमंदिर अकृत्रिम हQ उन सबको मेरा नमस्कार होवे। अधर् निमिष भी की गई जिनेन्द्र देव की भक्ति अनंतानंत जन्म के पाप समूह को एेसे ही नष्ट कर देती है कि जैसे आग्नि की एक चिनगारी कोसें के पूâस के ढेर को भस्म कर देती है। श्री गौतमस्वामी अर्हंत भगवान को महानदी¤पी तीथर् बना रहे हQ — अर्हन्महानदस्य, त्रिभुवनभव्यजनतीथर्यात्रिकदुरित- प्रक्षालनैककारण-मतिलौकिककुहकतीथर्मुत्तमतीथर्म्।।२३।। अर्हद्देव महानद उत्तम-तीथर् अलौकिक हQ जग म्ें। त्रिभुवन भविजन तीथर्स्नान से, पापें का क्षालन करते।।२३।। अथर्- जो तीन भुवन म्ें निवास करने वाले भव्यजन™प तीथर् यात्रियें के पाप कमर् के प्रक्षालन करने म्ें आद्वितीय कारण है, जिसने लौकिक मिथ्या तीर्थों का आतिâमण-उल्लंघन कर दिया है।।२३।। भावाथर्- श्री गौतमस्वामी ने भगवान महावीर स्वामी को महानदी¤प महातीथर् बनाया है। पुनः कहते हQ कि—आप तीथर्स्व¤प भगवन् संसार के सभी नदी तीर्थों से बांढकर ‘अलौकिक’ और सर्वोत्तम ‘तीथर्स्व¤प’ हो। आपके इस तीथर् म्ें तीनें लोकें के भव्यजीव स्नान करने के लिये आते हQ और अपने पापमलें को धो डालते हQ। लौकिक तीथर् जो नदी¤प म्ें प्रसिद्ध है उनम्ें स्नान से तो शरीर मल धुलता है किन्तु भगवंतें की भक्ति¤पी गंगा म्ें स्नान करने से-विशेष भक्ति करने से जन्म-जन्म म्ें संचित कमर् नष्ट हो जाते हQ। श्री गौतमस्वामी ज्योतिषी देवें के विमानें के जिनमंदिर की वंदना करते हQ— ज्योतिषामथ लोकस्य, भूतयेÓद्भुतसम्पदः। गृहाः स्वयंभुवः सन्ति, विमानेषु नमामि तान्।।२०।। ज्योतिष देवें के विमान म्ें, अद्भुत संपत्युत जिनगेह। स्वयंभुवा प्रतिमा भी अगणित, उन्हW नमूँ निज वैभव हेतु।।२०।। अथर् - अनन्तर ज्योतिषी देवें के विमानें म्ें अÆुत सम्पत्तिधारी अर्हंतें के जो शाÕात जिनगृह हQ उनको मQ विभूति- आत्मसंपत्ति के लिये नमस्कार करता हूँ ।।२०।। विशेषाथर्- जैन भूगोल ग्रांथें के अनुसार व षट्खंडागम ग्रांथ के अनुसार मध्यलोक म्ें

सबसे आिधक ज्योतिषी देव हQ। उनके सूयर्, चंद्रमा, ग्राह, नक्षत्र व तारागणें के असंख्यातें विमानें म्ें प्रत्येक म्ें जिनमंदिर हQ अत: असंख्यातें ज्योतिवार्सी देवें के जिनमंदिर व जिनप्रतिमाआW की श्री गौतमस्वामी ने वंदना की है। चंद्र विमान ३६७२-८/६१ मील का है। सूयर् विमान ३१४७- ३३/६१ मील का है। सबसे छोटा तारा का विमान २५० मील का है जो कि यहाँ से अपने को ®पये बराबर छोटा सा दिखता है। श्री गौतम स्वामी वैमानिक देवें के जिनमंदिरें की वंदना करते हQ— वन्दे सुरतिरीटाग्रा- मणिच्छायाभिषेचनम्। या: ›âमेणैव सेवन्ते, तदचार्: सिद्धिलब्धये।।२१।। सुरपति के नत मुकुटमणि-प्रभ से आिभषेक हुआ जिनका। वैमानिक सुर सेवित प्रतिमा, सिद्धि हेतु मQ नमूँ सदा।।२१।। अथर्- जिनके चरण जो देवें के मुकुटें के अग्रा भाग म्ें लगी हुई मणियें की कान्ति से आिभषेक को प्राप्त हQ अथार्त् जिनके चरणें म्ें वैमानिक देव सिर झुकाते हQ उन वैमानिक देवें के विमान म्ें स्थित प्रतिमाआW को मुक्ति की प्राप्ति के लिये मQ नमस्कार करता हूँ ।।२१।। विशेषाथर्- ऊध्वर्लोक म्ें ८४ लाख, ९७ हजार, तेईस जिनमंदिर माने हQ। ये सभी सौधमर् स्वगर् से लेकर सवार्थर्सिद्धि विमान तक हQ। इन सभी जिनमंदिरें म्ें विराजमान जिनप्रतिमाआW की श्री गौतमस्वामी ने वंदना की है। स्वर्गों म्ें देवगण जन्म लेते ही अंतर्मुहूतर् म्ें उपपाद शय्या से उठते ही अवधिज्ञान से अपने पूवर्भव को जानकर पुन: भक्ति से सवर्प्रथम मंदिर म्ें जाकर भगवंतें का दर्शन, पूजन आदि करते हQ।

(२९) (३०) (३१) (३२) श्री गौतमस्वामी अर्हंत नदी म्ें ज्ञान¤पी जल की कल्पना करते हुये कहते हQ— लोकालोकसुतòव- प्रत्यवबोधनसमर्थदिव्यज्ञान- प्रत्यहवहत्प्रवाहं - ›तशीलामलविशालवूâलद्वितयम्।।२४।। लोकालोक सुतòव प्रकाशक, दिव्यज्ञान जल नित बहता। शील ® सद्›त विशाल निमर्ल, दो तट से शोभित दिखता।।२४।। अथर्- जिसम्ें लोक और अलोक का सच्चा स्व™प समझाने म्ें समथर् एेसे दिव्य केवलज्ञान या मतिश्रुतादि ज्ञान ही प्रतिदिन बहते हुये जल प्रवाह हQ, ›ात और शील ही जिसके स्वच्छ और विशाल दो तट हQ एेसा यह अलौकिक उत्तम तीथर् है।।२४।। भावाथर्- नदी म्ें जल भरा रहता है। यहाँ केवलज्ञान¤पी जल भरा हुआ है अथवा श्रुतज्ञान¤पी जल भरा हुआ है। ›तें और शील को दो किनारे बनाये हQ, जहाँ से लोग उत्तर कर नदी म्ें स्नान करते हQ। इन पाँच महा›तें या अणु›तें से तथा समिति आदि या गुण›त आदि शीलगुणें से ही परम्परा से केवलज्ञान¤पी जल को प्राप्त किया जा सकता है। श्री गौतमस्वामी अलौकिक तीथर् म्ें राजहंस आदि का सुन्दर उपमा दिखा रहे हQ— शुक्लध्यानस्तिमित- स्थितराजद्राजहंसराजितमसकृत्। स्वाध्यायमंद्रघोषं नानागुणसमितिगुप्ति-सिकतासुभगम्।।२५।। शुक्लध्यानमय राजहंस, स्थिर राजत है इस नद म्ें। मंद्रघोष स्वाध्याय विविधगुण, समिति गुप्ति बालू चमके।।२५।। अथर्- जो शुक्ल ध्यान™प स्थित एेसे दीप्त राजहंसें कर शोभित है, जिसम्ें निरंतर स्वाध्याय पाठ ही मनोज्ञ नाद (शब्द) हQ, जो चौरासी लाख गुण, पंच समिति और तीन गुप्ति™प सिकता (बालू) से सुशोभित है।।२५।। भावाथर्- नदी म्ें हंस रहते हQ, कल कल शब्द होते रहते हQ व बालू रहती है। यहाँ महातीथर् म्ें धमर्ध्यान-शुक्लध्यान को ध्याने वाले मुनि ही राजहंस हQ। मुनियें—श्रावकें द्वारा किये गये स्वाध्याय पाठ आदि-स्तुतिपाठ आदि ‘कलकल’ शब्द हQ। अनेक गुण, समिति, गुप्ति आदि यहाँ ‘बालू’ चमक रही हQ। श्री गौतमस्वामी इस महानदी तीथर् म्ें पेâन आदि का अभाव दिखाते हुय कहते हQ— व्यपगतकषायHोâनं, रागद्वेषादिदोष-शैवलरहितम्। अत्यस्तमोहकर्दम- मतिदूरनिरस्तमरण-मकरप्रकरम्।।२७।। रहित कषाय पेâन से राग-द्वेष आदि शैवाल रहित। रहित मोह कीचोड से मरणादिक जलचर मकरादि रहित।। २७।। अथर्- कषाय™प Hोâन जिसम्ें न„ हो गया है, जो राग-द्वेषादि दोष™प शैवाल (कंाजी) से रहित है, जिसम्ें मोह™प कीचोड का अभाव है, मरण™प मकरें का समूह न„ हो चुका है।।२७।। भावाथर्- नदी म्ें पेâन, शैवाल-काई, कीचोड व मगरमच्छ आदि रहते हQ, किन्तु यहाँ इस महानदी म्ें ›âोध, मान आदि कषाय¤पी ‘पेâन’ नहाIR है। रागद्वेष आदि काई नहाIR है। मोह¤पी कीचोड नहाIR है और मृत्यु¤पी मगरमच्छ नहाIR हQ। समवसरण म्ें भक्तें की भी मृत्यु नहाIR हो सकती है। यही विशेष माहात्म्य है। हम और आप एेसे तीथर् बनने की भावना भाय्ें। भव्यात्माआW! कषाय, राग, द्वेष और मोह ये ही अनंत संसार म्ें हम्ें व आपको भüमण

करा रहे हQ। इन्हW आज कम करने का अभ्यास करW व परम्परा से नष्ट करके इस महातीथर् स्व¤प बनकर आत्मा को पवित्र करW। श्री गौतमस्वामी लोकोत्तर तीथर् म्ें लहरें को दिखा रहे हQ— क्षान्त्यावतर्सहœां, सवर्दयाविकचकुसुमविलसल्लतिकम् दु:सहषरीषहाख्य- द्रुततरंगत्तरंगभंगुरनिकरम्।।२६।। क्षमादि हQ आवतर् सहœों, सवर्दयामय कुसुम खिले। लता शोभती दु:सह परीषह, भंग तरंगित हQ लहरW।।२६।। अथर्- जिसम्ें क्षमागुण ही हजारें आवतर् - भंवरे हQ सम्पूणर् प्राणियें पर दयाभाव ही खिले हुए पुष्पें से शोभायमान बेल है, दु:सह क्षुधादि परीषह ही शीघ्Ç इधर - उधर Hौâलती हुई चंचल तरंगें का समुदाय है, ।।२६।। भावाथर्- नदी म्ें भंवर उठते रहते हQ, पुष्प खिले रहते हQ, लहरW उठती रहती हQ। यहाँ क्षमा, मार्दव आदि ‘भंवर’ हQ। सवर् प्राणियें पर दयाभाव¤प पुष्प खिले हुये हQ। अनेक क्षुधा, तृषा आदि परीषहें को जीतना ये ही तरंग्ें-लहरW उठ रही हQ। एेसा यह जिनेन्द्र भगवान का अलौकिक तीथर् है। इसम्ें अनंत भव्यजीवें ने स्नान करके जन्म- जन्म के पाप मलें को धोकर आत्मा को पवित्र करके परमात्मा बनाया है। आवो ! हम और आप सभी इस महातीथर् म्ें अवगाहन करके अपने कमर् मलें को दूर करW।

(३३) (३४) (३५) (३६) श्री गौतमस्वामी ने अलौकिक नदी का सुन्दर चित्रण किया हQ— त्र+षिवृषभस्तुतिमंद्रो-द्रेकितनिर्घोष-विविधविहगध्वानम्। विविधतपोनिधिपुलिनं, साœावसंवरणनिर्जरानिœावणम्।।२८।। त्र+षि प्रधान के मधुर स्तव हें, विविध पक्षि के शब्द सÂश। विविध साधुगण तट हQ आœाव, रोध निर्जरा जल निःसृत।।२८।। अथर्- त्र+षिश्रो... गणधरदेवादिकें द्वारा बोली गई स्तुतियें के मनमोहक उत्कृष्ट शब्द ही नाना प्रकार के पक्षियें के कलरव हQ, नाना प्रकार के तपोनिधि - मुनि ही किनारा है, जो आते हुए कमर्™प जल के संवरण - रोक देने से और आए हुए कमर्™प जल के नि:œावण - निकलने से मुक्त-रहित हQ।।२८।। भावाथर्- त्र+षियें म्ें श्रोष्ठ एेसे गणधर और महामुनि आदि जो भगवान की स्तुति कर रहे हQ, नदियें म्ें पक्षी के कलरव-शब्द होते रहते हQ सो वे इस अर्हंत नदी म्ें उन पक्षियें के शब्द सÂश हQ। अनेक महामुनिगण भव्यें के लिये पुल के समान हQ। यह अर्हंत तीथर् भव्यें के पाप कर्मों को रोक देने से 'संवर' का काम करता है और अशुभ कर्मों को नि:œावण - निकाल देने से निर्जरा भी करा देता है। जैसे लौकिक तीर्थों म्ें जल रोका भी जाता है और किसी तरफ से निकाला भी जाता है वैसे ही इस उत्तम तीथर् म्ें भी पाप के आने को रोकना व संचित पापें को निकालना-निर्जरा होना भी हो रहा है। श्री गौतमस्वामी ने इस महातीथर् म्ें सभी गणधर आदि देव के नहाने का वणर्न किया हQ— गणधरच›âधरेन्द्र- प्रभृतिमहाभव्यपुंडरीवैâ: पु®षै:। बहुभि: स्नातं भक्त्या , कलिकलुषमलापकषर्णाथर्ममेयम्।।२९।। गणधर च›âी इन्द्र आदि जो, भव्य प्रवर बहु पु®ष प्रधान। कलिमल कलुष दूर करने हित, भक्ति से यहाँ किया स्नान।।२९।। अथर्- जिसम्ें गणधर, च›âधर, इन्द्र आदि भव्य-पुंडरीक पु®षें ने पाप™प कलुष मल को दूर करने के लिये भक्तिपूवर्क स्नान किया है, जो बांडा भारी है।।२९।। भावाथर्- यहाँ गणधर से सभी मुनिगण व आर्µयका समूह लेना है, च›âधर से सभी राजा, महाराजा त्रैर्वµणक श्रावक व श्राविकाय्ें आ जाय्ेंगी और इंद्र से सभी चारें प्रकार के देव-देवियाँ विवक्षित हQ, क्येंकि इन सभी के साथ आगे कहे गये 'महाभव्यपुंडरीक' विशेषण लगा हुआ है, अत: इन महाभव्यें म्ें प्रधान एेसे गणधरदेव, च›âवर्ती व इंद्र हQ और प्रभृति शब्द से—इत्यादि म्ें उन सभी बारह सभाआW म्ें स्थित मुनिगण, आर्µयकागण, श्रावक व श्राविका, देव, देवियाँ व बारहव्ें कोठे के भव्य पशुगण भी आ जाते हQ। ये सभी भक्ति से अपने पापमलें को धोने के लिये इस अनुपम अर्हंत महातीथर् म्ें स्नान करते हQ। श्री गौतमस्वामी स्वयं इस अर्हंत महानदी म्ें स्नान कर रहे हQ— अवतीणर्वत: स्नातुं, ममापि दुस्तरसमस्तदुरितं दूरं। व्यवहरतु परमपावन-मनन्यजय्यस्वभावभावगभीरम्।।३०।। इस विध श्री अर्हंत महाप्रभु, महातीथर् गणधर कहते। भविजन पाप मैल क्षालन हित, इसम्ें अवगाहन करते।। आित पावन यह तीथर् अन्य से, अजेय अनुपम है गंभीर। मQ स्नान हेतु

उतरा हूँ, मम दुष्कृत मल करिये दूर।।३०।। अथर्- जो परम पवित्र है, जिनके स्व™प प्रतिवादियें द्वारा न जीते जा सव्ेंâ एेसे जीवादि पदार्थों से जो अगाध है एेसा अर्हंत™प महानद स्व¤प उत्तम तीथर् हQ उसम्ें पापमल के प्रक्षालनहेतु स्नान करने के लिये प्रवि„ हुए मेरे भी दुस्तर समस्त पापें का व्यवहरण-नाश करे ।।२९-३०।। भावाथर्- श्री गौतमस्वामी कहते हQ कि—मQ भी इस आपके-महातीथर् म्ें स्नान करने के लिये उतरा हूँ। यह महातीथर् आfतिशय पवित्र है, दूसरें के द्वारा अजेय है और बहुत ही गहरा है। यह तीथर् मेरे समस्त पापमल - कमर्मलें का प्रक्षालन करे। श्री गौतमस्वामी भगवान की वीतरागता का बहुत ही सुंदर वणर्न करते हुये वधर्मान स्वामी की वंदना कर रहे हQ— अताम्रनयनोत्पलं, सकलकोपवÖेजर्यात् कटाक्षशरमोक्षहीन-मविकारतोद्रेकत:। विषादमदहानित:, प्रहसितायमानं सदा मुखं कथयतीव ते, πदय-शुद्धिमात्यन्तिकीम्।।३१।। ›âोधाग्नि को जीत लिया नहिं, नेत्र कमल लालिमा प्रभो! नहिं विकार उद्रेक अत: प्रभु, Âि° कटाक्ष रहित तुम हो।। मद विषाद से रहित अत:, स्मित मुख सदा रहे भगवन् । कहता है यह मंदहास्य तव, अंतःकरण शुद्धि पूरण।। ३१।। अथर्- हे भगवन् जिनेन्द्र ! सम्पूणर् कोप™प आग्नियें के क्षय हो जाने से जिसम्ें नयन™प कमलपत्र कुछ-कुछ लाल हQ या लालिमा रहित हQ, वीतरागता की परम प्रकषर्ता के होने से जो कटाक्ष™प वाणें के छोंडने से रहित है, विषाद और मद की हानि होने से सदा प्रHुâल्लित है एेसा आपके यथाजात™प म्ें आपका मुखकमल आपके πदय की आत्यंतिक शुद्धि को कह रहा है।।३१।। भावाथर्- भगवान की शांत मुद्रा का सुन्दर वणर्न है, नेत्रें म्ें लालिमा नहाR है, कटाक्ष नहाR हQ, माथे म्ें सिकुोंडन नहाR है। यह वीतराग मुद्रा ›âोध, विकार व विषाद तथा गवर् से रहित होने से अंत:करण की परम पवित्रता को प्रगट कर रही है।

(३८) (३७) (३९) (४०) श्री गौतमस्वामी वस्त्राभरण रहित वीतराग छवि का वणर्न करते हQ— निराभरणभासुरं , विगतरागवेगोदया- Vारंबरमनोहरं , प्रकृति™पनिर्दोषत:। निरायुधसुनिभर्यं, विगतहिंस्यहिंसा›âमात्, निरामिषसुतृप्तिमद्-विविध-वेदनानां क्षयात्।।३२।। रागोद्रेक रहित होने से, बिन आभूषण शोभित हो। प्रकृति ™प निर्दोष तुम्हारा, प्रभु निवर्Œा मनोहर हो।। हिंसा Eहस्य भावविरहित से, आयुध रहित सुनिभर्य हो। विविध वेदना के क्षय से बिन-भोजन तृप्त सदा प्रभु हो।।३२।। अथर्- हे भगवन्! आपका ™प राग के आवेग के उदय के न„ हो जाने से आभरण रहित होने पर भी भासुर™प-सुंदर है, आपका स्वाभाविक ™प निर्दोष है इसलिये वŒा रहित नग्न होने पर भी मनोहर है, आपका यह ™प न औरें के द्वारा हिंस्य है और न औरें का हिंसक है इसलिये आयुध रहित होने पर भी अत्यन्त निभर्य स्व™प है तथा नाना प्रकार की क्षुत्पिपासादि वेदनाआW के विनाश हो जाने से आहार न करते हुए भी तृप्तिमान् है।।३२।। भावाथर्- भगवान की मुद्रा आभूषण, वस्त्र व आयुध से रहित है। भोजनपान से भी रहित है, फिर भी सुन्दर, मनोहर, निभर्य व परमतृप्त दिखती है। श्री गौतमस्वामी भगवान के मुखकमल के अवलोकन की महिमा दिखाते हQ— मितस्थितनखांगजं, गतरजोमलस्पर्शनं नवांबु®हचंदन-प्रतिमदिव्यगन्धोदयम्। रवीन्दुकुलिशादि-दिव्यबहुलक्षणालंकृतं दिवाकरसहœाभासुर-मपीक्षणानां प्रियम्।।३३।। वृद्धि रहित नख केश प्रभो! रजमल स्पर्श न हो तन को। विकसित कमल सुचंदन सम है, दिव्य सुगंधित देह विभो! रवि शशि व» दिव्य लक्षण से, शोभित तव शुभ™प महान। कोटि सूयर् से आधिक चमक, फिर भी दर्शक को प्रिय सुखदान।।३३।। अथर्- आपके नख और केश नहाR बाेढते हQ वे उतने ही हर समय रहते हQ। जितने केवलज्ञान की उत्पत्ति के समय होते हQ। रजोमल का स्पर्श भी आपके नहाR हQ, आपके ™प म्ें विकसित कमल और चन्दन के सÂश दिव्यगंध का उदय है। आपका यह ™प सूयर्, चन्द्रमा, व» आदि एक सौ आठ प्रशस्त- चिन्हें से अलंकृत है तथा हजारें सूर्यों के समान भासुर होकर भी नेत्रें को अत्यन्त प्रिय है।।३३।। भावाथर्- तीथËकर भगवान के केवलज्ञान होने के बाद नख और केश नहाR बाेढते हQ। रज और मल का स्पर्श नहाR होता है। भगवान के परमौदारिक शरीर म्ें दिव्य सुगंधि रहती है। सूयर्, चंद्र शुभ लक्षण शरीर म्ें रहते हQ तथा हजारें सूर्यों से आधिक तेजस्वी शरीर होकर भी सभी के नेत्रें को आल्हादित करता है। श्री गौतमस्वामी भगवान के मुखकमल को चारें तरफ से दिखने की महिमा दिखाते हQ— हिताथर्परिपंथिभि:, प्रबलरागमोहादिभि: कलंकितमना जनो, यदभिवीक्ष्य शोशुध्यते। सदाभिमुखमेव यज्जगति पश्यतां सवर्त: शरद्विमलचन्द्र- मंडलमिवोत्थितं Âश्यते।।३४।। मोहराग से दूषित हितपथ-द्वेषीजन के सुन उपदेश। कलुषमना जन हुए जगत म्ें, शुचि होते वे तुमको देख।। आतिशय युत तव मुख दर्शक, जन को अपने सन्मुख दिखता। शरद् विमल शशि मंडल सम, तव आस्य चन्द्र है

उदित हुआ।।३४।। अथर्- आपके ™प को देखकर मोक्ष के परिपंथी - शत्रु एेसे प्रबल राग, मोह आदि दोषें से कलंकित मनवाला जन समुदाय आfतिशय शुद्ध हो जाता है, जो जगत् म्ें देखने वालें को चारें दिशाआW म्ें सदा सन्मुख ही शरत्कालीन उदयास्व¤प निमर्ल चन्द्रमा के समान दीखता है।।३४।। भावाथर्- हित के शत्रु प्रबल मोह, राग, द्वेष आदि हQ इनसे दूषित एकांतवादी जनें का कलुषित मन भी आपके मुखकमल को देखकर शुद्ध सम्यग्दर्शन प्राप्त कर लेता है। आपका मुख चारें दिशाआW म्ें दिखता है, यद्यपि मुख एक है परन्तु परमौदारिक दिव्य शरीर होने से एक एेसा ही आfतिशय हो जाता है। श्री गौतमस्वामी भगवान से सकल जगत को पवित्र करने की प्राथर्ना कर रहे हQ— तदेतदमरेÕर-प्रचलमौलिमालामणि— स्Hुâरत्किरणचुंबनीय-चरणारविन्दद्वयम्। पुनातु भगवज्जिनेन्द्र ! तव ™पमन्धीकृतं जगत् सकलमन्य-तीथर्गु®™पदोषोदयै:।।३५।। अमरेÕर के नमस्कार से, मुकुट मणिप्रभ किरणें से। चुम्बित चरण सरो®ह भगवन् ! तव शुभ™प मनोहर है।। अन्य देव गु® तीथर् उपासक, सकल भुवन यह अन्ध समान। उन सबको तव ™प पवित्र, करे अ® नेत्र करे अमलान।।३५।। अथर्- देवेन्द्रें के द्वारा नमस्कार प्रवण मुकुटें की पंक्तियें म्ें जटित मणियें की स्Hुâरायमान किरणें से आपके दोनें चरण-कमल आलिंगित- स्पर्शित हQ एेसा वह यह आपका ™प, जैनमत से भिVा अन्य मिथ्या तीर्थों से भी गु®™प - आfधक¤प राग-द्वेष, मोहादि दोषें के प्रादुभार्व से अन्धे हुए सारे जगत को पवित्र करे ।।३५।। भावाथर्- अनादिकाल से ये सारे जगत के अज्ञानी लोग मिथ्यात्व के निमित्त से आत्मा, परलोक व मोक्ष आदि के सच्चे स्व¤प को नहाR समझने से अंधे के समान हो रहे हQ। हे भगवन् ! आपका ¤प इस जगत के मोही प्राणियें को पवित्र करे-पावन करे। आपके चरण युगल देव-इंद्रें के द्वारा नमस्कृत हQ और तीनें लोकें म्ें महान हQ, पूज्य हQ।

(४१) (४२) (४३) (४४) 'णमंसंति' का अथर् पंचांग प्रणाम करना किया है। यहाँ श्री गौतम स्वामी ने इनकी भक्ति करके दु:खें का क्षय आदि की भावना- याचना करते हुये जिनेन्द्र भगवान के गुणें की प्राप्ति की याचना की है। यही सर्वोत्कृष्ट याचना है। श्री गौतमस्वामी रचित, चैत्यभक्ति है ज्येष्ठ। मQने गणिनी ज्ञानमती, किया अनुवाद ये श्रोष्ठ।।१।। वीर संवत् चौबीस सौ, अ॰ानवे आिभवंद्य। मगसिर वदि दशमी तिथी, पूणर् किया यह ग्रांथ।।२।। चैत्यभक्ति का पाठ नित, करो करावो भव्य। पद्य गद्य अनुवाद पोढ, सुख पावो नित नव्य।।३।। इति श्रीगौतमस्वामीकृत चैत्यभक्ति समाप्ता। N : श्N : श्N : श् श्री गौतमस्वामी तीनें लोकें के समस्त कृत्रिम—अकृत्रिम जिनप्रतिमाआW की वंदना करते हुये अंचलिकाॅप म्ें एक साथ नमस्कार करते हQ— आलोचना या अंचलिका इच्छामि भंते! चेइयभक्तिकाउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं। अहलोय-तिरियलोय-उ लोयम्मि िकिóमािकिóमाणि जाणि जिणचेयाणि ताणि सव्वाणि तीसुवि लोएसु भवणवासिय- वाण-विंतर-जोइसिय-कप्पवासियत्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गंधेण, दिव्वेण पुफ्Hोâण, दिव्वेण धूवेण, दिव्वेण चुण्णेण, दिव्वेण वासेण, दिव्वेण ण्हाणेण, णिच्चकालं अंचंति पुज्जंति वंदंति णमंसंति अहमवि इह संतो तत्थ संताइं णिच्चकालं अंचेमि पुज्जेमि वंदामि णमंसामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं। भगवन् ! चैत्यभक्ति अ® कायोत्सगर् किया उसम्ें जो दोष। उनकी आलोचन करने को, इच्छुक हूँ धर मन सन्तोष।। अधो मध्य अ® ऊध्वर्लोक म्ें, अकृत्रिम कृत्रिम जिनचैत्य। जितने भी हQ त्रिभुवन के, चउविध सुर करW भक्ति से सेव।।१।। भवनवासि व्यंतर ज्योतिष, वैमानिक सुर परिवार सहित। दिव्य गंध सुम धूप चूणर् से, दिव्य न्हवन करते नितप्रति।। अर्चें पूज्ें वंदन करते, नमस्कार वे करW सतत। मQ भी उन्हW यहाR पर अचूË, पूजूँ वंदूँ नमूँ सतत।।२।। दुःखें का क्षय कर्मों का क्षय, होवे बोधि लाभ होवे। सुगतिगमन हो समाधिमरणं, मम जिनगुण संपति होवे।।३।। अथर्- हे भगवन्! चैत्यभक्ति और तत् संबंधी कायोत्सगर् किया उसकी आलोचना करने की इच्छा करता हूँ। अधोलोक, तियर्ग्लोक और ऊध्वर्लोक म्ें जो कृत्रिम और अकृत्रिम जितनी प्रतिमाएँ हQ उन सबको तीन लोक म्ें भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिष्क और कल्पवासी ये चार प्रकार के देव अपने-अपने परिवार सहित दिव्य गंध से, दिव्य पुष्पें से, दिव्य धूप से, दिव्य चूणर् से, दिव्य सुगंधित वस्तु से और दिव्य आिभषेक सदा अचार् करते हQ, पूजा करते हQ, वंदना करते हQ, नमस्कार करते हQ, मQ भी यहाR पर बैठा हुआ वहाँ स्थित प्रतिमाआW को सदा अचार् करता हूं, पूजा करता हूँ, वंदना करता हूँ, नमस्कार करता हूँ, मेरे दुःखें का क्षय हो, कर्मों का क्षय हो, बोधि-रत्नत्रय का लाभ हो, सुगति म्ें गमन हो, समाधिमरण हो और जिनगुणसंपत्ति की प्राप्ति हो। भावाथर्- यहाँ इस अंचलिका म्ें सामूहिकॅप से तीनें लोकें की संपूणर् कृत्रिम-अकृत्रिम प्रतिमाआW की

वंदना की है। चारें प्रकार के देवें द्वारा ये सभी जिनप्रतिमाय्ें आिभषेकपूवर्क दिव्य अष्ट द्रव्यें से पूजी जाती हQ। टीकाकार ने ‘अंचंति’ का अथर् आिभषेक करना, ‘पूजंति’ का अथर् पूजा करना, ‘वंदंति’ का अथर् स्तुति करना एवं वीरभक्तिः यः सवार्णि चराचराणि विधिवद्-द्रव्याणि तेषां गुणान्। पयार्यानपि भूतभाविभवतः, सवार्न् सदा सवर्दा। जानीते युगपत् प्रतिक्षणमतः, सवर्ज्ञ इत्युच्यते सवर्ज्ञाय जिनेÕर्ाराय महते, वीराय तस्मै नमः।।१।। पद्यानुवाद जो विधिवत् सब लोक चराचर, द्रव्यें को उनके गुण को। भूत भविष्यत् वतर्मान, पयार्यें को भी नित सबको।। युगपत समय-समय प्रति जाने, अतः हुए सवर्ज्ञ प्रथित। उन सवर्ज्ञ जिनेÕर्ार महति, वीर प्रभु को नमूँ सतत।।१।। जो सम्पूणर् चर—अचर द्रव्यें को उनके सहभावी गुणें को और ›âमभावी भूत, भावी तथा वतर्मान सब पयार्यें को भी सदा सवर्काल अशेष विशेषें को लिये हुए युगपत् काल ›âम से रहित एक साथ प्रतिक्षण जानते हQ, इसलिए उन्हW सवर्ज्ञ कहते हQ, उन सवर्ज्ञ महान गुणोत्कृष्ट आिन्तम तीथËकर वीर जिनेश्वर को नमस्कार हो। वीरः सवर्सुरासुरेन्द्रमहितो, वीरं बुधाः संश्रिाताः वीरेणाभिहतः स्वकमर्निचयो, वीराय भक्त्या नमः। वीरात्तीथर्मिदं प्रवृत्तमतुलं, वीरस्य वीरं तपो वीरे श्री द्युति-कान्ति-कीतिर्-धृतयो, हे वीर! भद्रं त्वयि।।२।। वीर सभी सुर असुर इन्द्र से, पूज्य वीर को बुध सेव्ें। निज कर्मों को हता वीर ने, नमः वीर प्रभु को मुद से।। Ô ह्रीं गौतमस्वामिकृतचैत्यभक्ति महास्तोत्राय नमः। Ô ह्रीं श्रीगौतमस्वामिकृतवीरभक्ति महास्तोत्राय नमः। Ô ह्रीं श्रीगौतमगणधरस्वामिने नमः।

अतुल प्रवतार् तीथर् वीर से, घोर वीर प्रभु का तप है। वीर म्ें श्री द्युति कांति कीतिर्, धृति हQ हे वीर! भद्र तुमम्ें।।२।। वीर जिनेश्वर सब सुरेन्द्रें और असुरेन्द्रें द्वारा पूजित हQ। वीर जिनेश्वर को गणधरादि बुधजन संसार समुद्र से पार होने के लिए आश्राय लेते हQ, वीर जिनेश्वर ने अपने और पर के कर्मो के समूह को विनष्ट किया है। वीर भगवान को भक्ति से सिर झुकाकर नमस्कार करता हूँ। वीर! जिनसे भव—सागर से तारने वाला यह अतुल तीथर् प्रवृत्त हुआ है। वीर जिनेश्वर का बा¢ और अभ्यन्तर तप भारी दुष्कर था जो औरें म्ें नहाR पाया जाता था। वीर जिनम्ें बा¢भ्यन्तर लक्ष्मी, शरीर की ज्योति, कान्ति, कीतिर्, धृति ये सब गुण विद्यमान हQ। इसलिए हे वीर ! आप म्ें ही कल्याण है।।२।। ये वीरपादौ प्रणमन्ति नित्यं, ध्यानस्थिताः संयमयोगयुक्ताः। ते वीतशोका हि भवन्ति लोके, संसारदुगË विषमं तरंति।।३।। जो नित वीर प्रभू के चरणें, म्ें प्रणमन करते ®चि से। संयम योग समाधीयुत हो, ध्यान लीन होते मुद से।। इस जग म्ें वे शोक रहित हो, जाते हQ निश्चित भगवन्। यह संसार दुगर् विषमाटवि, इसको पार करW तत्क्षण।।३।। ध्यान म्ें एकाग्राता को प्राप्त हुए, संयम से उपलक्षित योग से युक्त होते हुए जो भव्य पु®ष वीर भगवान के चरणें को नित्य प्रणाम करते हQ वे लोक म्ें शोक से विमुक्त होते हQ और विषम संसार¤पी अटवी के पार पहुँच जाते हQ।।३।। ›तसमुदयमूलः संयमस्कन्धबन्धो, यमनियमपयोभिवर्धितः शीलशाखः। समितिकलिकभारो गुप्तिगुप्तप्रवालो गुणकुसुमसुगन्धिः सत्तपश्चित्रपत्रः।।४।। ›त समुदाय मूल है जिसका, संयममय स्वंâध महान् । यम अ® नियम नीर से सिंचित, बोढी सुशाखाशील प्रधान।। समिति कली से भरित गुप्तिमय, केंपल से सुन्दर त® है। गुण कुसुमें से सुरभित सत्तप, चित्रमयी पत्तें युत है।।४।। जिसका ›तें का समुदाय मूल—जोड है, संयम—स्कन्धबन्ध है, जो यम— नियम¤प जल से वृाEद्धगत है, अठारह हजार शील जिसकी शाखाएं हQ, जिसम्ें समितियाँ¤प कलिकाएं हQ, गुप्तियां प्रवाल (पल्लव) है, चौरासी लाख गुण¤प पुष्पें की सुगन्धि है, सम्यक्त्व विचित्र पत्र हQ।।४।। शिवसुखफलदायी यो दयाछाययोद्यः (द्घः) शुभजनपथिकानां खेदनोदे समथर्ः। दुरितरविजतापं प्रापयVान्तभावं स भवविभवहान्यै नोÓस्तु चारित्रवृक्षः।।५।। शिवसुख फलदायी यह त®वर, दयामयी छाया से युत। शुभजन पथिक जनें के खेद, दूर करने म्ें समरथ नित।। दुरित सूयर् के हुए ताप का, अन्त करे यह श्रो‰ महान् । वर चारित्र वृक्ष कल्पद्रुम, करे हमारे भव की हान।।५।। जो मोक्ष¤पी फल को देने वाला है, दया¤प छाया से प्रशस्त है, भव्यजन¤प पथिकें के सन्ताप को दूर करने म्ें समथर् है, एेसा पाप¤प सूयर् के सन्ताप का अन्त—नाश करने वाला वह चारित्र¤प वृक्ष हमारे संसार म्ें जो गत्यादि नाना भव हQ उनके विनाश के लिए होवे।।५।। चारित्रं सवर्जिनैश्चारितं, प्रोत्तंâ च सवर्शिष्येभ्यः। प्रणमामि पंचभेदं, पंचमचारित्रलाभाय।।६।। सभी जिनेÖर ने भवदुःखहर, चारित को पाला ®चि से। सब शिष्यें को भी

उपदेशा, विधिवत् सम्यक् चारित ये।। पाँच भेद युत सम्यक् चारित, को प्रणमूँ मQ भक्ती से। पंचम यथाख्यात चारित की, प्राप्ति हेतु वंदूँ मुद से।।६।। सब तीथËकरें ने स्वयं चारित्र का अनुष्ठान किया है और सब शिष्यें के लिए जैसा है वैसा स्पष्ट कहा है। अत: सब कर्मों के क्षय के साधक पंचम यथाख्यातचारित्र की प्राप्ति के लिए सामायिकादि पांच भेदें से समन्वित चारित्र को मQ प्रणाम करता हूँ।।६। धमर्ः सवर्सुखाकरो हितकरो, धमË बुधाश्चिान्वते। धर्मेणैव समाप्यते शिवसुखं, धमार्य तस्मै नमः। धमार्Vास्त्यपरः सुÙद्रवभृतां, धमर्स्य मूलं दया, धर्मे चित्तमहं दधे प्रतिदिनं, हे धमर्! मां पालय।।७।। धमर् सवर्सुख खानि हितंकर, बुधजन करW धमर् संचय। शिवसुखप्राप्त धमर् से होता, उसी धमर् के लिए नमन।। धमर् से अन्य मित्र नहिं जग म्ें, दयाधमर् का मूल कहा। मन को ध™ धमर् म्ें नित, हे धमर्! करो मेरी रक्षा।।७।। धमर्¤प चरित्र स्वगर् और अपवगर् सम्बन्धी सब सुखें का आकर अथार्त् उत्पत्ति स्थान है। सब जीवें के हित का करने वाला है, चारित्र¤प इस धमर् को सभी विवेकशील तीथËकर आदि संचित करते हQ। धमर् से ही मोक्ष सुख की प्राप्ति होती है। उस धमर् के लिए नमस्कार हो, धमर् के सिवा और कोई संसारी जीवें का उपकारक मित्र नहाR है। धमर् का मूल दया है। इस प्रकार के धमर् म्ें मQ प्रतिदिन अपना चित्त लगाता हूँ। हे धमर् तू मेरा पालन कर।।७।। धम्मो मंगलमुद्दिªः (मुक्किªः), आEहसा संयमो तवो। देवा वि तस्स पणमंति, जस्स धम्मे सया मणो।।८।। धमर् महा मंगलमय है यह, कहा वीर प्रभु ने जग म्ें। प्रमुख आEहसा संयम तप भी, धमर् सदा उत्तम सब म्ें।। जिसके मन म्ें सदा धमर् है, सुरगण भी उसको प्रणम्ें। मQ भी नमूं धमर् को संतत, धमर् बसो मेरे मन म्ें।।८।। यह चारित्र¤प धमर् उत्कृष्ट मंगल है अथार्त् मल को गालन—दूर करने वाला और सुख को देने वाला है। वह धमर् ही आEहसा, संयम और तप¤प परमोत्कृष्ट मंगल हQ, क्येंकि जिसका मन धमर् म्ें सदा तल्लीन है उसको देव भी नमस्कार करते हQ।।८।। श्री गौतमस्वामी रचित, वीरभक्ति का पाठ। मQने गणिनी ज्ञानमति, किया पद्य अनुवाद।।१।। पढो पांढावो भव्यजन, करो वीर गुणगान। श्री जिनेन्द्र की भक्ति से, पावो स्वात्मस्थान।।२।। N : श्N : श्N : श् (४७) (४८) (४५) (४६)

पाठ-स्रोत: दिगम्बर जैन ग्रन्थ संग्रह (डिजिटाइज़्ड मूल पाठ) · CC BY-NC-SA 4.0

यह मूल पाठ है — अर्थ/टीका सम्मिलित नहीं। अशुद्धि दिखे तो GitHub पर shastra/bhakti-sangraha.md सुधारें।